ISSN: 0973-0583

विद्यालय में पाठ्यक्रम द्वारा छात्रों का विकास

डॉ० विक्रम सिंह
सहायक प्राध्यापक, शिक्षा विभाग, आर. के. कॉलेज, मधुबनी

शोध सार

पाठ्यक्रम छात्रों को आवश्यक ज्ञान प्रदान करता है। छात्रों को यह भी मालूम रहता है कि अमुक स्तर पर उनका ज्ञान अमुक स्तर तक होना चाहिए। पाठ्यक्रम ज्ञान-विज्ञान का साधन है। नागरिकता का विकास पाठ्यक्रम के द्वारा छात्रों को सुयोग्य एवं कुशल नागरिक बनाया जाता है। पहले पाठ्यक्रम को ही पाठ्यक्रम या कोर्स के अध्ययन का ढांचा समझा जाता था। पाठ्यक्रम बच्चे के व्यक्तित्व के संर्पूण विकास पर बल देता है, जिससे कि बालक वातावरण तथा समाज में अपना सामंजस्य स्थापित कर सकें। लेकिन जब शिक्षा प्रणाली के बारे में पता चलता है, तो Syllabus vs Curriculum के बीच तुलना पर विचार नहीं करते हैं। इसकी संरचना को अधिक विस्तृत तरीके से समझ सकते हैं। एक अच्छे शिक्षा के विचार में पाठ्यक्रम का अर्थ सिर विद्यालय में पढ़ाये जाने वाले विषयों से नहीं हैं बल्कि यह छात्र के उन सारे अनुभवों से है जो वह विद्यालय में प्राप्त करता है। इस प्रकार छात्र का पूरा स्कूली जीवन "School life" पाठ्यक्रम है जो छात्रों को बेहतर से बेहतर बनाता। सीखना संयोग से नहीं होता है, यह कठिनता के साथ मांगा जाना चाहिए और परिश्रम के साथ भाग लेना चाहिए। हमारे शैक्षणिक जीवन में ज्ञान की एक अनंत सीमा है। पाठ्यक्रम को मानव जाति के संपूर्ण ज्ञान तथा अनुभव का सार समझना चाहिए।'

Curriculum में सम्पूर्ण सामग्री सम्मिलित है जैसा कि शिक्षा बोर्ड द्वारा निर्धारित समयावधि में फैले किसी विशेष पाठ्यक्रम के लिए दिया जाता है। जबकि Syllabus कवर किए गए या अलग-अलग विषयों के सारांश की व्याख्या करता है जो उस विशेष पाठ्यक्रम के तहत किसी विशिष्ट विषय या अनुशासन में पढ़ाया जाएगा।

Curriculum प्रकृति में पूर्व निर्धारित रहता है क्योंकि इसकी संरचना को निर्दिष्ट तरीके से पालन करने की आवश्यकता होती है, जबकि Syllabus प्रकृति में अधिक वर्णानात्मक और लचीला होता है और इसे गैर-प्रिसक्रिप्टिव तरीके से कवर किया जा सकता है।

Curriculum को स्कूल या कॉलेज प्रशासन द्वारा सावधानीपूर्वक डिजाइन किया गया है, जबकि Syllabus शैक्षिक बोर्ड के शिक्षकों द्वारा बनाया जाता है।

Curriculum प्रत्येक शिक्षक के लिए समान रहता है जबकि Syllabus अलग हो सकता है और इसे अपनी व्यक्तिगत शिक्षण शैली के अनुसार विशिष्ट तरीके से कवर किया जा सकता है।

Difference Between Syllabus and Curriculum in Hindi का एक अन्य महत्वपूर्ण बिंदु यह है कि शब्द Curriculum लैटिन "curricule" से उत्पन्न हुआ है जिसका अर्थ है दौड़ना या कोर्स होता है। दूसरी ओर Syllabus शब्द की उत्पत्ति ग्रीक में "sittuba" शीर्षक slip या लेबल से हुई है।

Curriculum Syllabus की तुलना में अधिक व्यापक दायरे को शामिल करता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि Syllabus एक विशेष विषय तक ही सीमित है, जबकि Curriculum पूरे कोर्स के लिए संरचना प्रदान करता है। syllabus केवल एक वर्ष के लिए प्रदान किया जाता है जबकि Curriculum पूरे कोर्स को कवर करता है।

Curriculum में सभी विषय शामिल हैं और यह बताता है कि कोर्स के दौरान उनका अध्ययन कैसे किया जाएगा जबकि कोर्स के तहत प्रत्येक विषय के लिए Syllabus अधिक विस्तृत संस्करण है।

पाठ्यक्रम एक मार्ग है, जिस पर चलकर बालक अपने शिक्षा प्राप्त के लक्ष्य को पूर्ण करते हैं। दूसरे शब्दों में, शिक्षा एक मार्गदर्शक है जो पाठ्यक्रम के मार्ग पर दौड़ी जाती है और इसके द्वारा बच्चे का सर्वांगींण विकास करने का लक्ष्य प्राप्त किया जाता है। अन्य शब्दों में हम कह सकते हैं कि पाठ्यक्रम एक ऐसा दौड़ का मैदान है अथवा ऐसा साधन है जिसके द्वारा शिक्षक व जीवन के लक्ष्यों की प्राप्ति होती है।

प्राचीन काल में पाठ्यक्रम को पाठ्यक्रम का पर्यायवाची माना जाता था। इस दृष्टिकोण से पाठ्यक्रम का क्षेत्र बहुत ही सीमित, संकुचित व मौखिक प्रकृति का होता था। प्राचीन समय में शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान के कुछ क्षेत्रों व कुशलताओं पर अधिकार करा देना मात्र समझा जाता था। इस प्रकार पाठ्यक्रम के प्राचीन मतानुसार कुछ परिभाषाएँ दी गई हैं। कनिंगम के अनुसार, पाठ्यक्रम शिक्षक के हाथ में एक साधन है जिससे वह अपनी सामग्री को अपने आदर्श के अनुसार अपनी चित्रशाला में ढाल सके। 'पाठ्यक्रम स्कूलों में निर्देशन के कार्य के लिए एक निश्चित क्रम में व्यवस्थित किए गए विषयों के समूह अथवा अध्ययन की विषय वस्तु के रूप में जाना गया है' -डॉ0 सफाया के मतानुसार। फोबेल ने कहा है, 'पाठ्यक्रम को मानव जाति के संपूर्ण ज्ञान तथा अनुभव का सार समझना चाहिए।' 'पाठ्यक्रम में वे समस्त अनुभव निहित हैं जिनको विद्यालय द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उपयोग में लाया जाता है'

मुनरो के अनुसार।

हेनरी ने बताया कि, 'पाठ्यक्रम में वे सभी क्रियाएं आती हैं जो स्कूल में विद्यार्थियों को दी जाती हैं।' ल्यूसैम्प के मतानुसार, 'विद्यालय में बालकों के शैक्षिक अनुभव के लिए एक सामाजिक समूह की रूपरेखा पाठ्यक्रम कहलाता है।

पाठ्यक्रम की उपरोक्त सभी परिभाषाओं का विवेचन करने के बाद निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि पाठ्यक्रम का क्षेत्र बहुत ही विस्तृत है। यह छात्र के जीवन के सभी पहलुओं को स्पष्ट करता है फिर चाहे वह शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, धार्मिक, राष्ट्रीय, बौद्धिक या नैतिक किसी से भी जुड़े हो। वर्तमान समय में पाठ्यक्रम शिक्षकों को गॉड स्थान देकर तथा विद्यार्थी की क्षमताओं एवं अभिरूचियों को केंद में रखकर बनाया जाता है।

शिक्षा की प्रक्रिया में पाठ्यक्रम के महत्व एवं आवश्यकता पाठ्यक्रम शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति का साधन है। शिक्षाविदों ने भी यह स्पष्ट किया है कि पाठ्यक्रम विद्यालय तक ही सीमित नहीं रहता है बल्कि इसमें उसमें विद्यालय से बाहर की जाने वाली क्रियाएँ भी सम्मिलित होती है जिन्हें विद्यालयों में दी जाने वाली शिक्षा की प्राप्ति के लिए किया जाता है। प्रत्येक समाज, राज्य, राष्ट्र की अपनी कुछ मान्यताएँ होती है, विश्वास आदर्श एवं मूल्य होते हैं। इनकी पूर्ति के लिए शिक्षा की व्यवस्था करता है और उद्देश्य निश्चित करता है। इस प्रकार, पाठ्यक्रम शिक्षक एवं शिक्षार्थी के सामने स्पष्ट एवं निश्चित लक्ष्य रखता है और उनकी प्राप्ति के लिए उनके कार्य निश्चित करता है। नियोजित शिक्षा के लिए पाठ्यक्रम बहुत आवश्यक है जिसके निम्नलिखित उपयोग है।

शिक्षा प्रक्रिया की व्यवस्था : निश्चित पाठ्यक्रम अध्यापक और विद्यार्थी दोनों की कार्य निश्चित कर देता है। पाठ्यक्रम एक ऐसा लेखा-जोखा है जिसमें यह तय किया जाता है कि शिक्षा के किस स्तर पर इस पाठ्य विषय का कितना ज्ञान दिया जाए एवं किन क्रियाओं मैं कितनी दक्षता उपलब्ध कराई जाएगी और पाठ्यगामी सहगामी क्रियाओं को कैसे आयोजित किया जाएगा। पाठ्यक्रम के अंतर्गत विद्यालय के बाहर एवं भीतर दिए जाने वाले कार्यों की पूरी रूपरेखा होती है। अत: निश्चित पाठ्यक्रम शिक्षा की रूपरेखा को तय करता है और व्यवस्थित भी करता है।

शक्ति एवं समय का सदुपयोग : निश्चित पाठ्यक्रम में विद्यार्थी को यह पता रहता है कि उन्हें क्या-क्या सीखना है। अध्यापक और विद्यार्थी किसी भी स्तर पर भटक नहीं पाते हैं। परिणामस्वरूप शिक्षा की व्यवस्था बहुत ही सुचारू रूप से चलती है और अध्यापक एवं विद्यार्थी दोनों निश्चित रूप में कार्यो को पूरा करते हैं। इस तरह, समय एवं शक्ति दोनों का सदुपयोग होता रहता है।

बालकों की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति: मनुष्य में यह एक बड़ा गुण है कि वह सप्रयोजन क्रियाओं में रूचि लेता है और इस प्रकार के कार्य करना चाहता है जिससे उसे वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति तो होती है, भावी आवश्यकताओं की पूर्ति की भी व्यवस्था होती है। पाठ्यक्रम का निर्माण इन बातों को ध्यान में रखकर किया जाता है। अत: बच्चे उसे पूरा करने में रूचि लेते हैं। यह बात भी ध्यान देने की है कि यदि बालक निश्चित समय में अपना पाठ्यक्रम पूरा कर लेते हैं तो वह दुगुने उत्साह से आगे बढ़ते हैं।

पाठ्यक्रम पुस्तकों के निर्माण में सहयोग : किसी भी स्तर में निश्चित पाठ्यक्रम में उस स्तर पर पढ़ाए जाने वाले विषयों की सामग्री भी निश्चित होती है। इसके आध ार पर ही लेखक पाठ्यक्रम-पुस्तक तैयार करते हैं और उनमें आवश्यक सामग्री को भी स्थान देते हैं। पाठ्य पुस्तकों के अभाव में शिक्षा अनियंत्रित एवं अव्यवस्थित हो जाती है।

समान शिक्षा स्तर के लिए : पाठ्यक्रम निश्चित

होने पर पूरे समाज की शिक्षा का स्तर समान रहता है। पाठ्यक्रम स्वरूप हमें शिक्षा में सुधार की सही दिशा प्राप्त होती है। पाठ्यक्रम निश्चित नहीं होने की स्थिति में हम शिक्षा के स्तर के गिरते एवं उठने के कार्यों का पता नहीं लगा सकते हैं।

सही मूल्यांकन के लिए: विशेष स्तर के लिए विशेष पाठ्यक्रम के निश्चित होने से विशेष स्तर के विद्यार्थियों का मूल्यांकन हो जाता है। यदि विशेष स्तर के लिए विशेष पाठ्यक्रम की व्यवस्था नहीं होगी तो मूल्यांकन असंभव हो जाएगा। अध्यापक विद्यार्थियों का मूल्यांकन पाठ्यक्रम के आधार पर ही करता है।

शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए : किसी भी स्तर पर पाठ्यक्रम निर्माण कुछ निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किया जाता है। यदि हम पाठ्यक्रम को पूरा कर पाते हैं तो उद्देश्यों की प्राप्ति में भी हम सफल होते हैं वरना असफल हो जाते हैं।

यदि हम देखते हैं कि ऐसा पाठ्यक्रम विशेष से हमारे उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हो रही है तो हम पाठ्यक्रम में परिवर्तन कर देते हैं। यदि हमारे पास पाठयक्रम नहीं रहेगा तो हम यह तय करने में असमर्थ हो जाएंगे कि किन विषयों के सहयोग एवं किन क्रियाओं को करने से हमारे उद्देश्यों की पूर्ति हो रही है। कौन से विषय में कौन सी क्रियाएं कम उपयोगी है।

पाठ्यक्रम का आधार पाठ्यक्रम निर्माण एवं विकास की प्रक्रिया अनेक तथ्यों व सिद्धान्तों पर निर्भर करती है। शिक्षा के मुख्य आधार ये हैं- दार्शनिक आधार, मनोवैज्ञानिक आधार, ऐतिहासिक आधार, सामाजिक आधार, सांस्कृतिक आधार, वैज्ञानिक आधार आदि।

दार्शनिक आधार दर्शन शास्त्र की प्रकृति वैज्ञानिक है तथा दर्शन का संबंध मानव जीवन की अनुभूतियों से है। दर्शन व शिक्षा में घनिष्ठ संबंध है। शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियां व अनुशासन व्यवस्था आदि सभी पक्ष समसामयिक दर्शन से प्रभावित होते हैं। पाठ्यक्रम का तो मेरुदण्ड ही दर्शन है।

ब्राइटमैन के शब्दों में, ''दर्शन की परिभाषा एक ऐसे प्रयास के रूप में दी जा सकती है, जिसके द्वारा संपूर्ण मानव अनुभूतियों के विषय में सत्यता से विचार किया जाता है अथवा जिसके द्वारा हम अपने अनुभव का वास्तविक सार जानते हैं।'' फिक्टे के शब्दों में, ''दर्शन ज्ञान का विज्ञान है।''

बालक को क्या पढ़ाना चाहिए और क्या नहीं पढ़ाना चाहिये, इस प्रश्न का उत्तर व्यक्ति व समाज की दार्शनिक मान्यता के अनुरूप ही तय किया जाता है। शिक्षा की पाठ्यचर्या का निर्धारण शिक्षा के उद्देश्यों के अनुरूप किया जाता है। भिन्न भिन्न प्रकार के उद्देश्यों के अनुसार पाठ्यक्रम भी बदलता रहता है। यहां यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि शिक्षा की पाठ्यचर्या पर दर्शन का प्रभाव पड़े।

एक समय था जब भारत में शिक्षा का उद्देश्य आत्मानुभूति था। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उस काल के पाठ्यक्रम में धर्म शास्त्र एवं नीति शास्त्र के अध्ययन तथा निग्रह को अधिक महत्व दिया जाता था। इससे भिन्न आधुनिक युग में, जबकि शिक्षा के भौतिक-वादी उद्देश्य अत्यधिक प्रबल हैं, तब हमारे शैक्षिक पाठ्यक्रम में तकनीकी ज्ञान, प्रशिक्षण एवं भौतिक विज्ञान को अधिक महत्व दिया जा रहा है।

दर्शनशास्त्र न केवल शिक्षा के लिए उसके पाठ्यक्रम के निर्धारण में योगदान देता है, अपितु दर्शन ही पाठ्य विषयों की संख्या का भी निर्धारण करता है। इसका कारन यह है कि जब समाज में विभिन्न प्रकार की परिस्थितियाँ आवश्यकताएँ व आदर्श उत्पन्न हो जाते हैं, तो उन्हीं के अनुकूल शिक्षा के उद्देश्यों में भी वृद्धि करनी पड़ती है। शिक्षा के उद्देश्यों में वृद्धि के कारन उनकी पूर्ति के लिए पाठ्य विषयों में भी वृद्धि करनी पड़ती है। आज के भौतिकवादी युग में मानवीयता की उपेक्षा न हो, इसलिए इंजीनियरिंग आदि के प्रशिक्षण में मानवीय विज्ञान को भी स्थान दिया जाने लगा है। यह दर्शनशास्त्र द्वारा ही निश्चित हुआ है।

मनोवैज्ञानिक आधार- आधुनिक मनोविज्ञान ही बताता है कि प्रत्येक बालक के विकास की विभिन्न अवस्थाएँ होती हैं, जैसे बाल्यावस्था, किशोरावस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था, वृद्धावस्था आदि। इन्हीं अवस्थाओं को ध्यान में रखते हुए बालकों को शिक्षित किया जाना चाहिए। विकास की विभिन्न अवस्थाओं के ज्ञान के अभाव में बालक एक सी व नीरस शिक्षा प्राप्त करते रहते व अपना सर्वांगीण विकास करने में असमर्थ रहते।

शिक्षा में मनोविज्ञान के समावेश के परिणामस्वरूप अब बालकेंद्रित शिक्षा पर बल दिया जाने लगा है। पाठ्यक्रम

का निर्धारण भी बालक को केंद्र बनाकर किया जाता है। आधुनिक मनोवैज्ञानिक मान्यताओं के अनुसार सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली का केंद्र बालक को होना चाहिए। प्राचीन दृष्टिकोण के अनुसार शिक्षा प्रक्रिया का सबसे महत्वपूर्ण बिंदु शिक्षक को माना जाता था व छात्र को गौण स्थान प्राप्त था। शिक्षा की समस्त प्रक्रिया शिक्षा के चारों ओर घूमती रहती है परंतु वर्तमान शिक्षा प्रक्रिया छात्र के चारों ओर घूमती है व छात्र के अनुकूल कार्य करती है।

ऐतिहासिक आधार:

शिक्षाशास्त्र समाज की आवश्यकतानुसार शिक्षा की व्यवस्था करने का कार्य करता है। साथ ही वह समाज की शिक्षा संबंधी समस्याओं का निवारण करने का प्रयत्न करता है। परन्तु वह यह कार्य अकेले संपन्न नहीं कर सकता। अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उपाय व साधन ढूंढने और योजनाएँ बनाने में उसे इतिहास के अध्ययन से पर्याप्त सहायता मिलती है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के लिए इतिहास का ज्ञान आवश्यक है। इतिहास के द्वारा ही यह जाना जा सकता है कि पूर्व काल में शिक्षा की क्या व्यवस्था थी और तत्कालीन समाज के लिए यह कहां तक उपयोगी थी। इस प्रकार इतिहास के अध्ययन के द्वारा ही यह ज्ञात हो सकता है कि पूर्व कालीन समाज की शैक्षिक समस्याएँ क्या-क्या थी। समस्याओं के स्वरूप के अतिरिक्त इतिहास के अध्ययन द्वारा यह भी ज्ञात होता है कि उनके निवास के लिए क्या-क्या प्रयत्न किए गए और उन प्रयत्नों को कहाँ तक सफलता प्राप्त हुई। पूर्वकालीन पाठ्यक्रम में जो दोष या कमियाँ थीं उन्हें इतिहास के अध्ययन द्वारा वर्तमान में दोहराने से बचने का प्रयास किया जाता है।

सामाजिक आधार- शिक्षा व्यक्ति को सामाजिक प्राणी बनाती है और समाज शिक्षा के लिए आधार प्रस्तुत करता है। अन्य शब्दों में, शिक्षा एवं सामाजिक जीवन की ध ारणा में गहरा संबंध है। एक के अभाव में दूसरे की कल्पना नहीं की जा सकती है। समाजशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है जो कि समाजशास्त्रीय सिद्धांतों को एवं शिक्षा की समग्र प्रक्रिया को व्यावहारिक रूप देता है। इस प्रक्रिया में पाठ्यक्रम, विषय वस्तु, क्रियाएँ, शिक्षालय संगठन,विधियां तथा मूल्यांकन सभी सम्मिलित हैं।

ओटावे के मतानुसार, "शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है।" इसकी विधि और इसके लक्ष्य समाज विशेष की मान्यताओं के अनुसार तय होते हैं। जॉन डेवी ने भी सामाजिक चेतना को शैक्षिक विकास का आधार माना है। ब्राउन ने भी इस तथ्य को स्वीकार करते हुए कहा है कि समूह की सामाजिक चेतना में व्यक्ति का योगदान शिक्षा व समाज के मिले-जुले प्रयासों के कारण ही संभव है। इस प्रकार स्पष्ट है कि शिक्षा एवं समाजशास्त्र के मध्य गहरा संबंध है। समाजशास्त्र शिक्षाशास्त्र को प्रभावित तत्व प्रदान करता है। इसका कारण है कि समाजशास्त्र में शिक्षा के सामाजिक प्रभावों तथा मनुष्य के जीवन में उसकी गतिशीलता का अध्ययन किया जाता है। दूसरी ओर शिक्षा शास्त्र में समाज में व शिक्षा के स्वरूप तथा व्यक्तित्व विकास में योगदान आदि कारकों का अध्ययन किया जाता है।

सांस्कृतिक आधार समाज की जैसी संस्कृति होती है, उसी के अनुरूप शिक्षा की व्यवस्था की जाती है। संस्कृति के द्वारा उसके समाज की शैक्षिक प्रक्रिया पर्याप्त सीमा तक प्रभावित होती है। संस्कृति द्वारा ही शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियां, विद्यालय एवं अनुशासन के स्वरूप का निर्धारण होता है। जहां की संस्कृति में धर्म तथा आध्यात्मिक भावना प्रधान होती है, वहाँ पर शिक्षा शाश्वत मूल्यों की प्राप्ति पर बल देती है। यदि समाज की संस्कृति का स्वरूप भौतिक होता है तो शिक्षा द्वारा भौतिक उद्देश्यों की प्राप्ति का प्रयास किया जाता है। जिस समाज की कोई संस्कृति नहीं होती उसकी शिक्षा का स्वरूप भी अनिश्चित होता है।

शिक्षा के पाठ्यक्रम को भी संस्कृति अत्यंत प्रभावित करती है क्योंकि समाज की संस्कृति, शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण करती है और पाठ्यक्रम इन उद्देश्यों की प्राप्ति का साधन है। अत: पाठ्यक्रम समाज की संस्कृति पर ही आधारित होता है। चूंकि विद्यालय समाज का लधु रूप है। इसलिए समाज में फैली हुई संस्कृति विद्यालयों में दिखाई देती है। इस दृष्टि से विद्यालय समाज की संस्कृति के केंद्र होते हैं।

पाठ्यक्रम के लाभ

पाठ्यक्रम शिक्षा का एक अभिन्न अंग है, जिसके द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति होती है। शिक्षा के संपूर्ण क्षेत्र में इसका एक विशेष स्थान है, जो उद्देश्यों एवं आदर्शों के निर्धारण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह एक ऐसा साधन है जो छात्र एवं अध्यापक को जोड़ता है। अध्यापक पाठ्यक्रम के माध्यम से छात्रों के मानसिक, शारीरिक,

नैतिक, सांस्कृतिक, संवेगात्मक, आध्यात्मिक तथा सामाजिक विकास के लिए प्रयास करता है।

पाठ्यक्रम द्वारा छात्रों को प्रशिक्षण एवं अध्यापकों को दिशा-निर्देश के अवसर प्राप्त होते हैं। पाठ्यक्रम एक प्रकार से अध्यापक के पश्चात छात्रों के लिए दूसरा पथ प्रदर्शक है। पाठ्यक्रम में विषयों के साथ-साथ स्कूल के सारे कार्यक्रम आते हैं। शिक्षालय में होने वाले समस्त कार्यक्रम का आधार पाठ्यक्रम ही है। यदि पाठ्यक्रम को शिक्षा का प्राण कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति न होगी।

कुछ विद्वानों ने तो इसे शिक्षा एवं विद्यालय का दर्शनशास्त्र भी कहा है। इसके इस महत्व को देखते हुए यह आवश्यक हो जाता है कि इसका नियोजन वैज्ञानिक रीति से किया जाए। ऐसा होने पर ही विद्यालय का कार्य सुचारू रूप से चल सकता है। पाठ्यक्रम शिक्षण की निपुणता उसके उद्देश्यों और सामाजिक आवश्यकताओं के प्रति उसकी उपयुक्त निर्धारित करता है। पाठ्यक्रम के अनेक लाभों में कुछ पाठ्यक्रम के लाभ निम्न हैं-

1. शिक्षा की प्रक्रिया का व्यवस्थित होना:

पाठ्यक्रम एक ऐसा लेखा-जोखा है, जिसमें यह स्पष्ट किया जाता है कि शिक्षा के किस स्तर पर जैसे पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक, माध्यमिक आदि विद्यालयों में किन पाँच विषयों का कितना ज्ञान एवं किन क्रियाओं में कितनी दक्षता का विकास किया जाएगा।

2. शिक्षा का स्तर समान रहना: निश्चित पाठ्यक्रम से पूरे समाज की शिक्षा का स्तर समान रहता है। जिसके परिणाम स्वरूप हमें शिक्षा में सुधार की सही दिशा प्राप्त होती है। अनिश्चित पाठ्यक्रम की स्थिति में हम शिक्षा के स्तर के उठने तथा गिरने के कारणों का पता नहीं लगा सकते और उस स्थिति में शिक्षा में सुधार नहीं किया जा सकता।

3. उद्देश्यों की प्राप्ति संभव होती है: पाठ्यक्रम का निर्माण उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किया जाता है। यदि पाठ्यक्रम को सुचारू रूप से पूरा किया जाता है, तो शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति होती है। इस संदर्भ में हमें यह बात जान लेनी चाहिए कि यदि कोई निश्चित पाठ्यक्रम हो तो हम यह नहीं जान पाते कि किन विषयों के ज्ञान और किन क्रियाओं के प्रशिक्षण से हम अपने उद्देश्यों की प्राप्ति कर रहे हैं और कौन सी क्रियाएं निरर्थक हैं।

4. समय और शक्ति का सदुपयोग होना: निश्चित पाठ्यक्रम अध्यापक और विद्यार्थी दोनों के कार्य को निश्चित कर देता है। इससे अध्यापकों को यह पता रहता है कि उन्हें विद्यार्थियों को क्या सिखाने में सहायता करनी है और विद्यार्थियों को यह पता रहता है कि उन्हें क्या सीखना है। अध्यापक अथवा विद्यार्थी किसी के भी भटकने की गुंजाइश नहीं रहती। परिणामत: शिक्षा की प्रक्रिया बड़ी सुचारू रूप से चलती है और अध्यापक तथा विद्यार्थी दोनों ही निश्चित समय में निश्चित कार्यों को पूरा करते हैं।

5. मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति होना: निश्चित पाठ्यक्रम से बच्चों की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। मनुष्य एक ऐसा प्राणी है जो सप्रयोजन क्रियाओं में रूचि लेता है और ऐसा कार्य करना चाहता है जिससे उसकी वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति होती है और भावी आवश्यकता की पूर्ति की संभावना बढ़ती है।

निष्कर्ष:

पाठ्यक्रम का निर्माण इन बातों को ध्यान में रखकर ही किया जाता है। इसलिए बच्चे उसे पूरा करने में रूचि दिखाते हैं। इसके अतिरिक्त जब बच्चे एक निश्चित कार्य को एक निश्चित समय में पूरा कर लेते हैं, तो उन्हें बड़ी प्रसन्नता होती है और वह उत्साह से आगे बढ़ते हैं। पाठ्यक्रम शिक्षण की निपुणता उसके उद्देश्यों और सामाजिक आवश्यकताओं के प्रति उसकी उपयुक्त निर्धारित करता है। इस प्रकार निश्चित पाठ्यक्रम शिक्षा की क्रिया को व्यवस्थित करता है। इससे समय और शक्ति दोनों का सदुपयोग होता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:

1. आर0 ए0 शर्मा एवं शिखा चतुर्वेदी: विद्यालय पाठ्यक्रम विकास।
2. डॉ० सियाराम शर्मा: पाठ्यक्रम विकास एवं विद्यालय।
3. ललन प्रकाश सैनी: पाठ्यक्रम में विषयों की समझ।
4. डॉ0 रामशकल पाण्डेय: ज्ञान एवं पाठ्यक्रम, विकिपीडिया से संग्रहित ब्लॉग से संग्रहित।

❖❖❖